जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- ३०

धर्मतंत्र द्वारा लोकशिक्षण

(प्रवचन)

मंत्र बनाम उच्चारण

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥

मित्रो! मैं यह क्या कह रहा हूँ! मंत्र की शक्ति की बात कह रहा हूँ आपसे। जो मंत्र स्वयं के कल्याण के लिए, दूसरों को वरदान देने, आशीर्वाद देने के लिए, भगवान को प्रभावित करने के लिए प्रयुक्त होता हो, वह उस व्यक्ति की वाणी से इतना बलसंपन्न हो, जो भगवान के कानों के ऊपर हावी हो सके। भगवान से कहे कि आप हमारी बात सुनिए, आपको सुननी चाहिए। ऐसी आवाज जिसकी वाणी से निकलती हो, ऐसे शब्द जिसके मुँह से निकलते हों, उस आवाज को मंत्र कहते हैं। और अन्यों को? उच्चारण कहते हैं, प्रोनन्सिएशन कहते हैं। यह हम और आप बोलते हैं। लोग तरह-तरह की बोलियाँ बोलते हैं। इस तरह की बोलियाँ बोलकर आप भगवान को कोई खास प्रभावित नहीं कर सकते।

अगर आपका यह ख्याल है कि जो शब्द हम बोलते हैं, जिसको आप मंत्र कहते हैं, उन शब्दों की बनावट को सुनाकर के हम भगवान जी को प्रभावित कर सकते हैं तो ऐसा नहीं हो सकता। भगवान जी शब्दों की बनावट को सुनकर के, आपकी आवाज को सुनकर के, आपके मुँह से जो शब्द निकलते हैं, उन्हें सुनकर के, आपकी स्तुति को सुनकर के, प्रार्थना को सुनकर के, आपके श्लोक सुनकर के प्रसन्न हो जाते हैं, तो ऐसी बात नहीं है। आपने गलत समझा है।

ठाकुर रामायण

मित्रो! आपका यह ख्याल है कि भगवान जी को शब्दों से कोई खास मुहब्बत है तो यह समझ लें कि भगवान जी को शब्दों से कोई खास मुहब्बत नहीं है। यदि भगवान जी ऐसे रहे होते तो फिर हम अपने गाँव के ठाकुर रामायण से उनका मुकाबला करा देते हैं। हमारे गाँव में एक ठाकुर साहब रहते थे। गाँव के सारे बच्चे उनको जानते थे। वे जहाँ कहीं

बैठते, बच्चे उन्हें घेर लेते और कहते कि ताऊ जी! पहले बिल्ली की बोली बोलकर सुनाइए, नहीं तो निकलने नहीं देंगे। अच्छा बैठ जाओ, ऊधम मत मचाना। पहले चिलम पी लें, तब सुनाएँगे। अच्छा साहब! पी लीजिए। ताऊ जी! अब तो पी ली चिलम, अब तो सुनाइए। बस, वे मुँह उठाकर म्याऊँ-म्याऊँ ऐसे बोलने लगते थे। बच्चे खूब खुश होते और कहते कि ताऊ जी! अब कुत्ते की बोली सुनाइए। अच्छा, चुप बैठना, अब कुत्ते की सुनाता हूँ—भौं-भौं। बस, ऐसे करते थे। अब बकरी की बोली सुना दीजिए। अच्छा, बकरी की सुनाते हैं—मैं-मैं। बच्चों को मजा आ जाता और आधे घंटे के बाद बच्चे चले जाते और ताऊ जी भी चले जाते थे। सारे गाँव में वे मशहूर थे। ये ताऊ जी कौन थे और क्या बोलते थे? वे कुत्ते की भाषा बोलते थे, बिल्ली की बोली बोलते थे, गधे की बोली बोलते थे, घोड़े की बोली बोलते थे, भैंसे की बोली बोलते थे। वे सब जानवरों की बोलियाँ बोलते थे।

क्रिया-कलाप महत्त्वपूर्ण नहीं

मित्रो! यह मैं आपसे किसकी बात कह रहा हूँ? ताऊ जी की बात कह रहा हूँ। तो हमसे क्यों कह रहे हैं? इसलिए कि आप भी ताऊ जी हैं और तरह-तरह की बोलियाँ, तरह-तरह के श्लोक, तरह-तरह के मंत्र, तरह-तरह की प्रार्थनाएँ, तरह-तरह की पूजा करके भगवान को प्रसन्न करना चाहते हैं। उस भगवान को प्रसन्न करना चाहते हैं, जो आपके ईमान की बात सुनना चाहता है, जो आपके भीतर बसना चाहता है, जो आपके क्रिया-कलाप के बारे में ज्यादा महत्त्व नहीं देता कि आप क्या करते हैं और क्या नहीं करते हैं। आप किसका इस्तेमाल करते हैं और किस चीज का इस्तेमाल नहीं करते? आप तो भगवान को वस्तुओं से बहकाना चाहते हैं। आप वस्तुओं को दिखाकर बच्चों को बहका सकते हैं, परंतु भगवान को नहीं बहका सकते। नहीं साहब, हम रुद्राक्ष की माला से जप करेंगे, तो भगवान जी प्रसन्न हो जाएँगे। तो बेटे! रुद्राक्ष की माला से क्या

भगवान जी की मुहब्बत हो सकती है? हाँ साहब! भगवान जी तो ऐसे हैं, जो रुद्राक्ष की माला देखकर के फूलकर के कुप्पा हो जाते हैं। अच्छा, ऐसी बात है? हाँ साहब! इंदिरा गांधी को नेपाल में किसी बाबाजी ने रुद्राक्ष की माला दी थी तो वह प्रधानमंत्री हो गईं। तो आपका क्या मन है? हमको भी कहीं से ऐसा ही रुद्राक्ष मिल जाता, हम भी प्रधानमंत्री न सही, मुख्यमंत्री तो हो गए होते। एक सज्जन ऐसे ही थे। उसके पास एक असली रुद्राक्ष की माला थी। कहीं से उनके पिताजी लाए थे और नौकरी से लग गए थे। उन्होंने कहा कि गुरुजी! अब यह माला बेकार पड़ी है और हम नहीं चाहते कि यह जहाँ-तहाँ पड़ी रहे। इसे आप ले लीजिए। अच्छा, फिर दे जा। आप मेरे पास आइए, मैं दे दूँगा। मैंने अपनी पूजा में रख ली और भजन करने लगा।

उनके साथ ही जब कभी एक व्यक्ति और आ जाता और रुद्राक्ष की बात ही चिल्लाता। उसका मतलब शायद यह था कि मेरी पूजा की कोठरी में

जो रुद्राक्ष की माला रखी है, वह मुझे मिल जाए, तो मेरा भला हो जाए। माला न मिले तो उसका एक दाना ही मिल जाए। उसका यह ख्याल था कि गुरुजी को जो सिद्धियाँ मिली हैं, वे रुद्राक्ष की वजह से हैं। उसका यह वहम रुद्राक्ष के मनके के लिए था। आदमी बाहर से तलाश करता है कि गुरुजी महात्मा कैसे हो गए? वे कैसे लंबे-लंबे बाल बनाते हैं और बाल खड़े रखते हैं? आप क्या करना चाहते हैं? हम भी बाल खड़े रखेंगे? तो क्या हो जाएँगे? आचार्य जी हो जाएँगे। यह तो बहुत सस्ता है। इससे अच्छा उपाय और क्या हो सकता है। नकल बनानी है, तो ऐसी नकल करेगा, घटिया वाली नकल? नहीं! तुझे रुद्राक्ष की माला चाहिए, तो यह ले जा बेटे, मेरी ले जा। नहीं गुरुजी! आपकी नहीं लेंगे, इससे आपके हाथ की सिद्धि चली जाएगी और फिर आप खाली हाथ रह जाएँगे। बेटे! हम और तुम तो एक ही हैं, फिर हमारे चमत्कार कहाँ जाएँगे! हमारे पास से जाकर के तेरे घर चले जाएँगे। जब कभी

चमत्कार की जरूरत पड़ेगी तो हम माँग लेंगे। हमारी माला को भी ले जा और चमत्कार भी ले जा। दोनों चीजों को ले जा, घर में रखे रहना। हमें कोई जरूरत पड़ेगी या मुसीबत आ जाएगी तो माला को मँगा लेंगे या तेरे पास चमत्कार होंगे, उनको मँगा लेंगे। कोई चीज मँगा लेंगे। अभी तू ले जा। नहीं गुरुजी! मेरा मतलब यह नहीं था। बेटे! तेरा मतलब तो नहीं है, पर मेरा है। क्योंकि तेरी नीयत यहीं रुद्राक्ष के पास पड़ी रहेगी, इसलिए तू मेरे कहने से इसे ले जा। आपके कहने से? हाँ बेटे! मेरे कहने से ले जा। मैंने उसको रुद्राक्ष की माला दे दी।

सामग्री कर्मकांड का कोई महत्त्व नहीं

इसी तरीके से एक कोई व्यक्ति मुझे दक्षिणावर्ती शंख दे गया। दक्षिणावर्ती शंख दक्षिण की ओर घूमने वाला शंख होता है। सारे शंख तो बाईं ओर घूमते हैं, पर किसी-किसी का मुँह दाहिनी ओर घूम जाता है। इस तरह के शंख सेशेल्स स्थल में पाए जाते हैं। सेशेल्स स्थान कहाँ है? सेशेल्स एक फ्रांसीसी टापू

है। जब हम वहाँ से दारूसलेम से करांची की ओर अरेबियन सागर से होकर चलते हैं, तब वहाँ एक फ्रांसीसी टापू मिलता है—सेशेल्स। वह पहले फ्रांस में था, अब दो वर्ष पहले आजाद हो गया है। वहीं पर ये पाए जाते हैं। नारियल भी पाए जाते हैं और बिकते हैं। जब वहाँ पर पानी का जहाज रुका था, तो लोगों ने कहा था कि अगर आपको दक्षिणावर्ती शंख चाहिए तो ले जाइए। यहाँ मिल जाते हैं। मैंने कहा कि मेरा इसमें कोई इंटरेस्ट नहीं है। दक्षिणावर्ती शंख का मैं क्या करता?

राजस्थान में अलवर नाम का एक स्टेट है। वहाँ के एक राजा साहब अकसर हमारे पास आते रहते थे। वे जब भी आते तो यही कहते कि दक्षिणावर्ती शंख में बड़ा चमत्कार होता है। अगर यह मिल जाए तो बहुत फायदा है। वे बार-बार यही कहते कि आप कहीं से एक दक्षिणावर्ती शंख मँगा देते तो बहुत अच्छा होता। पहले तो मेरी समझ में नहीं आया, फिर पीछे ख्याल आया कि एक शंख तो मेरे पास ही रखा

है, इसलिए शायद यह कहता रहता है। कभी वह कहता कि गुरुजी! आपने कहीं दक्षिणावर्ती शंख तलाश कराया? बेटे! उससे क्या फायदा होता है? उससे लक्ष्मी आती है। ऐसा शंख जहाँ कहीं भी रहेगा गुरुजी! वहाँ लक्ष्मी आ जाएगी। अच्छा, तो लक्ष्मी आ जाएगी? फिर तो देख लेंगे। फिर मैंने कहा कि एक शंख तो मेरे पास भी रखा हुआ है, इसे ले जाओ। यह असली दक्षिणावर्ती शंख है। नहीं गुरुजी! इसे तो आप रखिए। नहीं बेटे! तू इसे ले जा। फिर तो गुरुजी! आपकी लक्ष्मी चली जाएगी? तो चली जाने दे। लक्ष्मी तो ऐसी बेशरम है कि इसको मारो, तो भाग-भागकर चली आती है और खुशामद करो तो यह गालियाँ देती है और नखरे दिखाती है। इसको भगाना ही है। बाबाजी के पास लक्ष्मी रहेगी, तो बाबाजी को हैरान करेगी। तू ले जा इसे और जब मार-मारकर भगाएगा तो फिर यह आएगी और अगर खुशामद करोगे तो यह आपसे दूर भागेगी। अच्छा, तो यह लक्ष्मी थी? हाँ थी। मैंने वह शंख उसे दे दिया।

साल भर बाद राजा साहब फिर आए। मैंने कहा—क्यों भाई! तुम कह रहे थे कि ढाई लाख रुपया कर्ज देना रह गया है, तो अब उस दक्षिणावर्ती शंख ने तो चुका ही दिया होगा? नहीं साहब! वह नहीं चुकाया। तो फिर ब्याज तो चुका ही दिया होगा? नहीं साहब! ब्याज भी नहीं चुकाया। धत तेरे की..........तो फिर तुम उसे बेकार ही ले गए। नहीं गुरुजी! आपका शंख वापस कर दूँगा। मैंने कहा कि नहीं, तू उसे रखे रह।

अध्यात्म जादूगरी नहीं है

मित्रो! ये बातें सुनकर मुझे बहुत दुःख होता है कि लोग अध्यात्म को मैजिक समझते हैं, जादूगरी समझते हैं। जादूगरी का अर्थ होता है—क्रियाकृत्य। क्रियाकृत्यों के माध्यम से, आवाज के माध्यम से, जीभ की नोंक के माध्यम से, बोले हुए शब्दों के माध्यम से लोग चमत्कार दिखाना चाहते हैं। बेटे! यह बाजीगरी है। जादूगर को अपना व्यक्तित्व बनाने की कोई जरूरत नहीं पड़ती है। उसको बस शब्दों

की हेरा-फेरी आनी चाहिए और हाथ की हेरा-फेरी आनी चाहिए। आपको भी हाथ की हेरा-फेरी आती है, नमस्कार करना आता है, मुद्राएँ बनानी आती हैं, हाथ जोड़ना आता है। यह शंख मुद्रा है, यह अमुक मुद्रा है। आपको अगर हाथ-पाँव चलाना आता है, तो आपके लिए यह काफी है कि आपके लिए अध्यात्म जादूगरी है और अगर अध्यात्म जादूगरी नहीं है, तब? तब फिर आपको अपना व्यक्तित्व विकसित करना पड़ेगा।

मित्रो! वाणी के द्वारा मंत्र बोले जाते हैं। इसको आपको अनुशासित करना चाहिए। वाणी क्या है? वाणी सरस्वती है। बाकी देवी-देवता कहाँ रहते हैं, यह मैं फिर कभी बताऊँगा, आज तो मैं आपको यह बताता हूँ कि सरस्वती का वचन कभी मिथ्या नहीं हो सकता है। सरस्वती वह है, जिसके शब्द सार्थक होकर के रहते हैं। यह देवी कहलाती है, वाणी कहलाती है, वाक कहलाती है। सरस्वती ज्ञान की देवी है। कल्याण की देवी है। सरस्वती जीभ में

रहती है। नहीं साहब! जीभ तो मांस की है। हाँ बेटे! है तो मांस की, लेकिन अगर आप उपासना कर लें तो आपकी जीभ साक्षात सरस्वती हो जाएगी। अगर हम कोई उपासना न करें? आप कोई उपासना मत कीजिए। बस, दो उपासनाएँ कर लीजिए। मैं आपसे वायदा करता हूँ और वचन देता हूँ कि आपकी जीभ में से सरस्वती उत्पन्न हो जाएगी और आपके वचन मंत्र हो जाएँगे, अगर आप दो तरीके से जीभ की उपासना कर लें तब। कैसे? एक उपासना के बावत कल मैं आपसे निवेदन कर रहा था और यह कह रहा था कि आपको आहार के बारे में गौर करना चाहिए। आहार की बनावट के बारे में नहीं, आहार के 'बेस' के बारे में ध्यान देना चाहिए। आहार का बेस—जो आप खाते हैं, उसमें पहनावा भी शामिल है।

खान-पान, रहन-सहन महत्त्वपूर्ण

मित्रो! खाना वहाँ तक सीमित नहीं है, जो केवल मुँह के भीतर अनाज डाला जाता है। खाने से मतलब उस सारे सामान से है, जो हमारी जिंदगी

के लिए काम आते हैं। इसमें वे खाद्य पदार्थ भी शामिल हैं, जिनको हम अन्न कहते हैं। अन्न के अलावा वस्तु भी अन्न है। जैसे पानी, हवा, अनाज, पहनना, चाय—ये सभी अन्न हैं, जो आपके शरीर के गुजारे के लिए काम आते हैं। जो चीजें हमारे गुजारे के काम आती हैं, जो हमारे शरीर का और जीवनक्रम का निर्माण करती हैं। आप समझते क्यों नहीं हैं? इनसे हमारा जीवन तैयार होता है। इनसे हमारा सारे के सारा कलेवर तैयार होता है। इन वस्तुओं से हमारा व्यक्तित्व तैयार होता है। हम जो खाते हैं, उससे खून बनता है। खून से मांस बनता है। मांस से हड्डियाँ बनती हैं। उनसे अमुक चीज बनती है और उनसे बन जाता है हमारा मन। हमारा मन क्या है? अरे भाई! खाद्य पदार्थ है और क्या है मन। हमें क्या करना चाहिए? वाणी को परिष्कृत करने के लिए हमारा आहार ऐसा होना चाहिए, जिसमें पूरे तरीके से सात्त्विकता का समावेश हो।

मित्रो! कल मैं आपके खान-पान के बारे में कह रहा था, सात्त्विकता की बाबत कह रहा था कि हमारा आहार तमोगुणी नहीं होना चाहिए। मांसाहार और नशेबाजी से मिली हुई चीजें हमारा खाद्य पदार्थ नहीं होना चाहिए, पर इसके आगे की एक मोटी बात भी मैंने कही थी कि आप अपनी थाली का मुआयना कर सकते हैं। जो अपनी थाली का मुआयना नहीं कर सकते, वे कुछ और भी चीजें खा सकते हैं। अतः आप उन्हीं चीजों का चयन कीजिए, जो आपके साधक जीवन को बनाने में सहायक होती हैं। आपको यह देखना है कि आपका जिन चीजों से गुजारा होता है, वह कहीं पाप की कमाई तो नहीं है? पाप की कमाई से अगर आप गुजारा करते हैं तो आपका समग्र व्यक्तित्व, जिसमें आपकी जीभ भी शामिल है, परिष्कृत नहीं हो सकती। अगर जीभ परिष्कृत नहीं होगी तो जो मंत्रों के चमत्कार बताए गए हैं, राम नाम का जो माहात्म्य बताया गया है, गायत्री मंत्र

की जो गरिमा बताई गई है, उस गरिमा से आप लाभ नहीं उठा सकेंगे।

जीवन में सात्त्विकता का समावेश

मित्रो! जीभ से हमारा मतलब केवल खाद्य पदार्थ से नहीं है। जीभ से मतलब जहाँ मुख है, वहीं हमारे गुजारे के माध्यमों से भी मतलब है। उसमें ईमानदारी का मिश्रण होना चाहिए। अगर यह नहीं है और आपको बेईमानी की कमाई पर चलना है तो आपका आहार, जिसके द्वारा मांस बना हुआ है, रक्त बना हुआ है, जिसके आधार पर आपका हृदय बना हुआ है, जिसमें आप भगवान का साक्षात्कार करना चाहते हैं, वह मस्तिष्क बना हुआ है, जिसके द्वारा आप ध्यान करना चाहते हैं, जिस मन को आप स्थिर करना चाहते हैं, वह मन स्थिर नहीं हो सकता। क्यों? क्योंकि आपका मन जिन वस्तुओं से बना हुआ है, वे वस्तुएँ सात्त्विक नहीं हैं। यदि आप सात्त्विक वस्तुओं से बना दें तो मन स्थिर हो जाएगा। गुरुजी! मन को स्थिर करने की विधि बता दीजिए।

बेटे! कोई भी विधि नहीं है। दुनिया में केवल एक ही विधि है कि आपके जीवन में सात्त्विकता का अधिकाधिक समावेश जितनी अधिक मात्रा में होता चला जाएगा, बिना किसी कोशिश के, बिना किसी मेहनत के, बिना किसी दबाव के, बिना किसी योगाभ्यास के आपका मन भगवान के चरणों में लीन होता हुआ चला जाएगा। ऐसा लीन होता हुआ चला जाएगा, जो हटाए नहीं हटेगा।

मौन : एक प्रकार का तप

मित्रो! अभी मैं आहार की बात, जीभ की बात कह रहा था। यह इसलिए कह रहा था कि आपको बोलने के संबंध में सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि जीभ के द्वारा हमारी सामर्थ्य बहुत व्यय होती है। जैसे हम एकाग्रता में, समाधि में हिस्सा लेते हैं, इसी तरीके से जीभ का भी संयम है। जो हम मौन के द्वारा अभ्यास करते हैं। अभी आपको दो घंटे का मौन बताया गया होगा। न बताया गया हो तो अब हम बता देंगे कि प्रातःकाल रोज दो घंटे आपको मौन रहना चाहिए।

गांधी जी सप्ताह में एक दिन मौन रखते थे। उनके मिलने वालों की भीड़ लगी रहती थी। उन्हें इतने जरूरी काम करने पड़ते थे कि क्या कहना, लेकिन वे मौन रहते थे। मौन रहने से उनकी शक्तियाँ बच जाती थीं। आपको भी अपनी वाणी का, सरस्वती की शक्ति का बचाव करने के लिए अनावश्यक बातचीत से बचना चाहिए, बाज आना चाहिए। अनावश्यक बातें मत कीजिए। लप-लप इधर-उधर की बात मत कीजिए। गपबाजी मत कीजिए। इनमें आपकी शक्तियाँ क्षीण होती हैं और आपको मंत्र के लिए जो सामर्थ्य संचित करनी चाहिए, उसमें कमी आती है। आप कम बोला कीजिए। जरूरत भर की चीजें बोला कीजिए। वजनदार चीजें बोला कीजिए। विचारपूर्वक बोला कीजिए। समझदारी की बातें बोला कीजिए। यह भी एक तरह का मौन है। आप समझते क्यों नहीं हैं।

वाणी : परम शक्तिशाली

गुरुजी! मौन से क्या फायदा होगा? बेटे! आपको मालूम नहीं है कि बोलने में आदमी की

कितनी शक्ति खरच होती है? जो शक्ति आपको आध्यात्मिक उन्नति के लिए आवश्यक है, वह इससे कितनी खरच होती है? अच्छा, हम आपको इस तरीके से तो नहीं बता सकते, पर यों बता सकते हैं—आपने किसी मरने वाले को देखा है? हाँ साहब! देखा है। मरने वाले की आँखें खुली रहती हैं। हाथ चलते रहते हैं, लेकिन क्या बंद रहता है? आदमी की आवाज बंद रहती है। बोलना पहले से ही बंद हो जाता है। आँखें काम करती रहती हैं। आँखों में से पानी निकलता रहता है। आँसू आते रहते हैं। कोई बाहर का आदमी आ गया तो आँसू भी आ जाते हैं। सिर भी हिल जाता है, लेकिन जीभ नहीं हिलती। क्यों? आप नहीं जानते कि जीभ से बोलने के लिए कितने सारे कल-पुरजों का इस्तेमाल करना पड़ता है। हमारे मुँह से जब शब्द निकलते हैं तो हमारे प्राचीनकाल के ऋषियों के मुताबिक एक सौ आठ कल-पुरजों का इसमें इस्तेमाल होता है। एक भी पुरजा इसमें से चक्कर में आ जाए तो हमारी वाणी

बंद हो जाती है, बेहोश हो जाती है, मौन हो जाती है। वाणी हमेशा के लिए काम करना भी बंद कर देती है।

हमारी वाणी जबरदस्त क्यों?

मित्रो! वाणी में बहुत शक्ति होती है। जिस वाणी को हम सरस्वती कहते हैं, उसमें शक्ति होती है। आपको उस सरस्वती में तीव्रता पैदा करनी चाहिए, उस सरस्वती में मंत्रशक्ति पैदा करनी चाहिए, जिस सरस्वती के माध्यम से आपको जप करना है तो क्या करना पड़ेगा? सरस्वती को जीभ पर नहीं, सरस्वती के द्वारा जीभ से जप करने के लिए आपको अपनी वाणी को मौन का अभ्यास कराना चाहिए। कम बोलना चाहिए। जरूरत से ज्यादा बेकार की बातें मत बोला कीजिए। यह भी एक मौन है—दो घंटे का। हमें भी मौन रहना पड़ता है। हमारे गुरुदेव जब एक साल के लिए हिमालय बुला लेते हैं तो हमें भी मौन रहना पड़ता है। बात कीजिए। किससे बात करेंगे? हमको ऐसी जगह रख देते हैं, जहाँ

कोई और नहीं होता हमारे अलावा। अपने आप से बात करनी है तो हमारी मरजी है। वास्तव में बात करने के लिए वहाँ कोई और होता नहीं, कोई जानवर भी नहीं होता है। जब हम वाणी को विश्राम देकर के आते हैं तो हमारी वाणी सामर्थ्यवान हो जाती है, ताकतवर हो जाती है। जबरदस्त हो जाती है। इसीलिए हम अपनी वाणी को बंद रखते हैं। कितनी देर बात करते हैं? हमने यह नियम बना रखा है कि जब कभी कोई हमसे मिलने के लिए आता है तो हमने उससे मिलने के लिए सीमित समय निर्धारित कर रखा है। बाकी समय क्या करते हैं? बाकी समय मौन रहते हैं। अधिक से अधिक कितनी देर लोगों से बात कर सकते हैं? लोगों से हम छह घंटे से ज्यादा बात नहीं कर सकते। हमने लोगों से मिलने के लिए छह घंटे निर्धारित कर रखा है। इससे ज्यादा हम बात नहीं करते। ऐसा क्यों करते हैं? वाणी की शक्ति को संचित करने के लिए करते हैं।

शब्दों के पीछे नैतिकता

मित्रो! वाणी का संयम, जिसमें अनावश्यक शब्दों का उच्चारण भी शामिल है, अनावश्यक खाद्य पदार्थों का खाना भी शामिल है और एक अन्य बात भी शामिल है—जिस तरीके से अन्न के पीछे नैतिकता जुड़ी रहनी चाहिए, उसी तरह से शब्दों के पीछे नैतिकता जुड़ी रहनी चाहिए। हमारे शब्द इस तरह के न हों, जो दूसरों को गुमराह करने वाले हों। दूसरों को गलत सलाह देते हों, दूसरों को झूठी दिलासा देते हों, दूसरों की हिम्मत भी कम करते हों। दूसरों को इस तरह के ख्वाब में ले जाते हों, जिससे कि आदमी हैरान होते हों, परेशान होते हों। क्या करना चाहिए? हमारी वाणी को सत्य बोलना चाहिए। ये सभी बातें सत्य में शामिल हैं। नहीं साहब! हम तो बड़ा सत्य बोलते हैं, पर हमसे सब लोग नाराज रहते हैं। भाई साहब! जो देखा-सुना है, वह कह देना ही सत्य में शामिल नहीं है। इसमें एक और बात शामिल होती है। सत्य का

दायरा बहुत बड़ा है। जो देखा-सुना है, उसमें तो हम आपको छूट भी दे सकते हैं। अगर आप सी० आई० डी० में हैं तो आपको इस बात के लिए पूरी छूट है, जिससे आपकी सत्यवादिता में कोई फरक नहीं आएगा। आप जहाँ डकैतों का पता लगाने के लिए, चोरों का पता लगाने के लिए जाएँ और अपना नाम बदल लें और कोई झूठी बात कह दें और खबर ले आएँ, तो आप झूठे नहीं हैं। फिर आप सत्य का पालन कर रहे हैं।

जीभ को कुसंस्कारी न बनाएँ

सत्य बड़ी चीज है। सत्य वहाँ भी शामिल होता है, जहाँ पर दूसरों के साथ में मुहब्बत जुड़ी होती है। सत्य, जो शब्द जैसा कहा गया है, वैसा होना चाहिए, उसमें व्यक्ति का अहंकार नहीं जुड़ा होना चाहिए। अकसर बात-बात में प्रत्येक वाणी में आदमी का अहंकार भरा हुआ होता है। इसलिए वचन इतने कडुए हो जाते हैं, भारी हो जाते हैं कि दूसरे आदमी के लिए सहन करना कठिन हो जाता

है। आपके वचन जब 'हैवी वाटर', जो कि एटम बम बनाने के काम आता है, की तरह से बड़े भारी हो जाते हैं, तो दूसरों को सहन करना मुश्किल हो जाता है। कब ? जब उसमें अहंकार जुड़ा हुआ होता है और दूसरों का तिरस्कार जुड़ा होता है। आप नम्रता से बात नहीं कर सकते ? आप दूसरों के सम्मान की रक्षा करते हुए बात नहीं कर सकते ? नहीं साहब ! हम नाराज हैं और पुलिस वाले हैं। हम तो गालियाँ देंगे। भाई साहब! गालियाँ देकर के आप अपने वजन को और अपनी जबान को गंदा क्यों करते हैं ? अगर आप अपनी जीभ को इसी तरीके से कुसंस्कारी बनाते चले जाएँगे, संस्कारविहीन बनाते चले जाएँगे तो आप आध्यात्मिकता का उद्देश्य पूरा न कर सकेंगे। अध्यात्म इतना छोटा नहीं है, जैसा कि आपने समझ रखा है कि पालथी मारकर किसी चौकी के पास जा बैठते हैं और वहाँ जो थोड़ा-बहुत क्रियाकृत्य बता दिया उसको पूरा कर लेते हैं। माला घुमा देने, किसी मंत्र या श्लोक का उच्चारण कर देने, धूपबत्ती जला

देने, अक्षत-पुष्प इधर-उधर रख देने जैसे क्रिया-कृत्यों को आप अध्यात्म समझते हों और यह ख्याल करते हों कि इतना भर कर देने से हमको वह आनंद मिल जाएगा, वह लाभ मिल जाएगा, जो आध्यात्मिकता के परिणामस्वरूप बताए गए हैं। राम नाम के जप के बताए गए हैं तो आप गलती करते हैं। आपने तो आध्यात्मिकता को मैजिक मान लिया है और यह समझ लिया है कि शब्दों का उच्चारण और थोड़े से क्रिया-कलापों की हेरा-फेरी करने से वे लाभ मिल जाते हैं, जो कि संतों को मिलने चाहिए, ऋषियों को मिलने चाहिए, श्रेष्ठ व्यक्तियों को मिलने चाहिए। आपने यह बहुत बड़ी गलती कर डाली। आध्यात्मिकता तो जीवन जीने की एक कला है, व्यक्तित्व निर्माण करने का ढंग है, एक फिलॉसफी है और एक साइंस है।

आत्मानुशासन जरूरी

मित्रो! इस चांद्रायण व्रत के क्रम में मैं आपसे निवेदन कर रहा था कि आपको अपने ऊपर

अनुशासन स्थापित करना चाहिए। इस अनुशासन में पहला क्रम यह था कि आप अपनी जिह्वा और वाणी का परिष्कार करें। जिह्वा और वाणी दो हैं। जिह्वा जो खाने के काम आती है, जिसको 'रसना' कहते हैं और दूसरी वाणी है, जो उच्चारण करने के काम आती है। कहने को तो यह एक है, पर असल में दो हैं। एक ज्ञानेंद्रिय है और दूसरी कर्मेंद्रिय है। जीभ हमारी कर्मेंद्रिय है, जो खाने के काम आती है, रोटी चबाने और खाना हजम करने के काम आती है, दूसरी वाणी, वह शक्ति है, जो हमारे बोलने के लिए काम आती है। बोलने की शक्ति, जिसमें प्रेम जुड़ा हुआ रहना चाहिए, सचाई जुड़ी हुई रहनी चहिए, मुहब्बत और सद्‌भावना जुड़ी हुई रहनी चाहिए, दूसरों का हित जुड़ा हुआ रहना चाहिए। दूसरों का सही मार्गदर्शन जुड़ा हुआ रहना चाहिए और दूसरों का सम्मान जुड़ा रहना चाहिए। इसमें अपना अहंकार न होकर, उसमें विनम्रता, सज्जनता और शराफत जुड़ी रहनी चाहिए। अगर

आपने इन सब चीजों को जोड़ करके रखा है तो मैं कहता हूँ कि आपकी जीभ सरस्वती है। इस सरस्वती के माध्यम से अगर आपने गायत्री का अनुष्ठान किया है तो मैं आपसे वायदा करता हूँ कि वह सफल और सार्थक होगा। इससे जो चमत्कार मिलने चाहिए, वे आपको जरूर मिल जाएँगे, अगर आपने जीभ को सही कर लिया है तब। जीभ को सही नहीं किया है तो भाई साहब! मैं आपसे कुछ नहीं कह सकता।

जप की सफलता का मूल

मित्रो! एक बार आपसे फिर कहता हूँ कि जप करें तो अच्छी बात है; अनुष्ठान करें तो बहुत अच्छी बात है, पूजा करें, ध्यान करें तो और अच्छी बात है, लेकिन सबसे अच्छी बात यह है कि आप अपनी जीभ को ऐसा अनुशासित बनाएँ, जिसके द्वारा निकले हुए वचन मंत्र होते हुए चले जाएँ और ऐसे हों, जो भगवान की अक्ल को ठिकाने लगाने में समर्थ हो सकें। जो आपको सफलता दिलाने में समर्थ हो सकें

और जो सारे के सारे वातावरण को, वायुमंडल को परिष्कृत बनाने में समर्थ हो सकें। ऐसा काम अगर आप कर लें तो अनुष्ठान का पहला चरण पूरा हो जाएगा। अनुष्ठानों में इसी तरह के प्रतिबंध लगाए जाते हैं, जैसा कि मैंने जीभ पर प्रतिबंध लगाने के लिए कहा है। अन्यान्य प्रतिबंधों की बात, जिसको योगाभ्यास अथवा तपश्चर्या कहा है, उसे मैं आपको क्रमशः इन अनुष्ठानों के बीच में बताऊँगा। आज की बात समाप्त।

॥ ॐ शान्तिः ॥

❐

अगणित समस्याओं का समाधान—अध्यात्म

चर्चा अध्यात्म की हो रही है। वह कोई जादूगरी नहीं। व्यक्ति और समाज को आच्छादित, प्रभावित, सुव्यवस्थित करने वाली एक प्रक्रिया है जिसमें प्रधानतया चिंतन, चरित्र और व्यवहार को उत्कृष्टता से सराबोर रहने की स्थिति बनती है इसलिए उसे व्यक्ति विज्ञान, समाज विज्ञान, नीतिशास्त्र और प्रगति परंपरा भी कह सकते हैं। उस प्रक्रिया को जन-जन के मन में उतारने से बात बनती है। मात्र कुछ जिज्ञासुओं के दार्शनिक प्रतिपादन का वह विषय नहीं है। कुछ भावुक जन इसे कथा, पुराण या सत्संग प्रवचन की तरह सुनते रहे और इस कान से सुनकर उस कान निकालते रहे तो भी कुछ बात नहीं बनती। धार्मिक कर्मकांडों के माध्यम से दृश्य के साथ भावना का समन्वय करते हुए उसे हृदयंगम करना पड़ता है।

पूजा-पाठ की प्रक्रिया में महानता के इष्ट को सामने रखकर उसके समतुल्य बनने के लिए, पात्रता विकसित करने के लिए धूप-दीप, अक्षत, पुष्प आदि से अर्चना को अविच्छिन्न अंग बनाने का प्रयास किया जाता है। सर्वतोमुखी उत्कृष्टता की विभूतियाँ तथा अतींद्रिय क्षमता कही जाने वाली ऋद्धि-सिद्धियाँ अनायास ही उभर पड़ती और निर्झर की तरह फूटकर अपने शीतल प्रवाह से असंख्यों का भला करती हैं।

ईश्वर को प्रशंसा या भेंट उपहार के माध्यम से बहकाया-फुसलाया नहीं जा सकता और न मनोकामनाओं के रूप में वह पाया जा सकता है। हमारे बदले का पुरुषार्थ भगवान पूरा करेगा या नाम रटते ही दुष्कर्मों के प्रतिफल से छुटकारा मिलता रहेगा, यह मान्यता सर्वथा मिथ्या है। उनका परिमार्जन तो प्रायश्चित द्वारा ही किया जाता है और समाज को जो क्षति पहुँचाई गई है उनकी क्षतिपूर्ति करनी पड़ती है। एक हाथ से दुष्कर्म और दूसरे

हाथ से पूजा–पाठ करते रहे तो स्थिति उपहासास्पद ही बनेगी।

आत्मिक प्रगति के लिए दो ही प्रमुख साधन हैं—एक तप जिसे संयम कहते हैं, यह प्रत्यक्ष जीवन में प्रयुक्त होता है। दूसरा साधनायोग जिसका तात्पर्य है शालीनता के, सत्प्रवृत्तियों के समुच्चय परमेश्वर के साथ अपने आप को पूरी तरह जोड़ देना। मन को कुत्साओं से हटाकर महानता के उदार आदर्शों के साथ अपनी विचारणा और भावना को पूरी तरह जोड़ देना। तपश्चर्या से जीवन का बहिरंग पक्ष निर्मल बनता है और योग से अंतरंग को उत्कृष्टता की चरम सीमा तक उछाल देने का क्रम आजीवन अहर्निश चलाते रहना पड़ता है। संक्षेप में चिंतन में उत्कृष्टता, चरित्र में आदर्शवादिता और व्यवहार में शालीनता का प्रगाढ़ समावेश करने की अनवरत प्रयत्नशीलता ही तप और योग की आत्मा है। इसके लिए कतिपय कर्मकांड ऐसे हैं जिन्हें अपनाने से कर्म के साथ ज्ञान जोड़ देने

जैसा सुयोग बनता है, यही है तत्त्वज्ञान का दर्शन पक्ष।

यह युगसंधि की वेला है। युग परिवर्तन का सुनिश्चित काल यही है। जैसा कि समझा जाता है कि इक्कीसवीं सदी विनाश, पतन और संकटों की होगी। इस प्रकार के कथन साधारण लोग बराबर कहते आ रहे हैं, पर अध्यात्म क्षेत्र की उच्चस्तरीय शक्तियाँ इस विपन्नता से जूझने और समृद्धि-प्रगति का वातावरण बनाने के लिए समय रहते जुट रही हैं और वे दोहरी भूमिका संपन्न करेंगी। दूसरे विकास के अभिनव आधार खड़े करेंगी।

अगले दिनों विश्व के बिखराव को समेटकर एक केंद्र पर लाया जाएगा। बढ़ा हुआ विज्ञान, कौशल, द्रुतगामी परिवहन और राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्रों का परस्पर गुँथ जाना ऐसे आधार हैं, जिनके कारण सुविस्तृत संसार एक गाँव, घर की तरह बन गया है। इसकी छिटपुट समस्याएँ एक-एक करके हल नहीं की जा सकेंगी वरन उन्हें एक-एक मुश्त ही सुलझाना

होगा। चेचक का उपचार फुंसियों पर मरहम लगाते फिरने से नहीं, रक्तशोधन से होता है। मक्खी-मच्छरों की बढ़ोत्तरी पर उन्हें एक-एक करके मारना कठिन है। नाले की गंदगी साफ करने और उस पर चूना फिनायल छिड़कने से ही समाधान बनता है। इसी प्रकार विश्व के हर क्षेत्र और वर्ग में बिखरी हुई अगणित समस्याओं का एक ही हल है कि विश्व को एकता की धुरी से जोड़ दिया जाए और उसके साथ मानवी क्षमता का सिद्धांत अविच्छिन्न रूप से जोड़ दिया जाए।

❒

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)